सम्पादकीय

भारत ऋषियों की परम्परा का राष्ट्र है। यहाँ लिपि के विकास से बहुत पहले से ज्ञान-विज्ञान की मौखिक परम्परा रही है। व्यक्ति, कुटुम्ब, समाज, परिवार क्रमशः बृहत्तर ईकाइयों के प्रति हमारे कर्तव्य इन परम्पराओं में अनुस्यूत रहे हैं। व्यक्ति स्वयं है, एक साथ भोजन करने वाले कुटुम्ब हुए, एक ऋषि-परम्परा को मानने वाले यानी एक गोत्र के समूह समाज कहलाये और समस्त प्राणिमात्र परिवार कहलाये। हमारे ऋषियों ने वृक्ष, पर्वत, नदी आदि समस्त जैविक और अजैविक वातावरण के साथ व्यक्ति का अटूट सम्बन्ध माना है, उसके प्रति कर्तव्यों का निर्धारण किया है, जो आदिकाल में मौखिक परम्परा में दैनन्दिन में प्रचलित व्यवहार में रही, बाद में उसे किसी व्यक्ति ने अपनी भाषा दी, उसे लिपिबद्ध किया। तथापि हम मूल प्रवर्तक को उसका श्रेय देते रहे। अतः सूत्रों, स्मृतियों, संहिताओं तथा धर्मशास्त्रों को हम उनके उपलब्ध पाठ के आधार पर पौर्वापर्य काल निर्धारित नहीं कर सकते।

सृष्टिकाल के आरम्भ से ही ऋषियों का अस्तित्व माना गया है। इनमें से दस ब्रह्मा के पुत्र माने गये हैं। इन्ही दस में से सात सप्तर्षि हैं। इन सप्तर्षियों ने हमारी सभ्यता के विकास में योगदान किया है। इन्होंने एक ओर नैतिक बल पर जोर दिया तो दूसरी ओर खेती करने, यज्ञ करने, रोगों की चिकित्सा करने के लिए हमारा मार्गदर्शन किया।

आज 'ऋषि' शब्द का नाम लेते ही एक बँधी-बँधायी हुई तथाकथित 'ब्राह्मणवादी' व्यवस्था हमारे सामने दिखा दी जाती है। अतः आज आवश्यकता है कि हम ऋषि-परम्परा तथा सप्तर्षि की परम्परा को व्यापक रूप में देखें। हम उस पुलह और काश्यप ऋषि को भी जानें, जिन्होंने हमें खेती करना सिखाया। विश्वामित्र को भी जानें जो वास्तु-विज्ञान के प्रवर्तक रहे। यदि हम ऋषियों की मौलिक परम्परा को जानेंगे तो हमें स्पष्ट प्रतीत होगा कि भारतीय सभ्यता और संस्कृति के ही नहीं, बल्कि पूरी सृष्टि-प्रक्रिया के आधार हैं। और तब हम यह भी जान पायेंगें कि हम सब उन्हीं ऋषियों की प्रजा हैं— चाहे बिन्दुज प्रजा हों या ज्ञानज हों। इससे हमारे अंदर आज भी सामाजिक राष्ट्रीय तथा वैश्विक एकता की भावना पल्लवित होगी। वसुधैव कुटुम्बकम् के पीछे जो मूल भावना छुपी हुई है, वह प्रस्फुटित होगी।

इसी उद्देश्य से यह अंक सम्पादित किया गया है। ऋषि तथा सप्तर्षि के विभिन्न आयामों पर विद्वान् लेखकों ने सन्दर्भ के साथ अपना आलेख देकर इसे समृद्ध किया है। आशा है कि पाठकगण इससे लाभान्वित होंगे तथा समता की अवधारणा को बल मिलेगा।